॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ आंगिरस स्मृतिः॥

श्री प्रभु के चरणकमलों में समर्पित:

श्री मनीष त्यागी
संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

आंगिरस स्मृतिः

गृहाश्रमेष धर्मेषु वर्णानामनुपूर्वशः ॥
प्रायश्चित्तविधि दृष्ट्वा . अंगिरा मुनिरखवीत् ॥ १॥

महर्षि अंगिराजी चारों वर्णों के गृहस्थ आश्रम आदि धर्मों में प्रायश्चित्त की विधि को विचार कर कहने लगे ॥१॥

अंत्यानामपि सिद्धान्नं भक्षयित्वा द्विजातयः ॥
चांद्र कृच्छ्रे तदर्धं तु ब्रह्मक्षत्रविशां विदुः ॥२॥

चांडाल के बनाये हुए सिद्ध अन्न को खाकर ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य को क्रमानुसार चांद्रायण, कृच्छ्र, अथवा अर्द्ध कृच्छ्र करना चाहिये ॥२॥

रजकश्चर्मकश्चैव नटो बुरुड एव च ॥
कैवर्तमेदभिल्लाश्च सप्तैते चांत्यजाः स्मृताः ॥३॥

रजक, चमार, नट, बुरुड, कैवर्त, मेद, भील, यह सव जाति अंत्यज कही गई हैं ॥ ३ ॥

अंत्यजानां गृहे तोयं भांडे पर्युषितं च यत् ॥
यहिजेन यदा पीतं तदेव हि समाचरेत् ॥४॥

जो ब्राह्मण अंत्यजों के घर का जल या उनके पात्र का बासी जल यदि अज्ञान से पी ले, तो शास्त्र में कहे हुए प्रायश्चित्त को उसी समय करे ॥४॥

चण्डालकूपे भांडेपु स्वज्ञानापिरते यदि ॥
प्रायश्चित्तं कथं तेषां वर्णे वर्णे विधीयते ॥५॥

यदि अज्ञान से चांडाल के कुँए अथवा पात्र का जल पीले, तो प्रत्येक वर्ण के पीनेवालों के बीच में किस प्रकारका प्रायश्चित्त करना होगा ॥ ५॥

चरेत्सांतपनं विप्रः प्राजापत्यं तु भूमिपः॥
तदर्थ तु नरेदेश्यः पादं शूद्रेषु दापयेत् ॥६॥

ब्राह्मण सांतपन व्रत, क्षत्रिय प्राजापत्य व्रत, वैश्य अर्ध प्राजापत्य व्रत, और शूद्र चौथाई प्राजापत्यको क्रमानुसार करें ॥३॥

अज्ञानात्पिरते तोयं ब्राह्मणस्त्वंत्यजातिषु ॥
अहोरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुद्धयति ॥ ७॥

यदि ब्राह्मण अज्ञान से अत्यंज जाति के यहाँ का जल पीले तो वह एक दिन उपवास करके दूसरे दिन पंचगव्य के पीने से शुद्ध होताहै ॥५॥

विप्रो विप्रेण संस्पृष्ट उच्छिष्टेन कदाचन॥
आचांत एव शुद्धयेत अंगिरा मुनिरब्रवीत् ॥८॥

यदि ब्राह्मण कदाचित उच्छिष्ट अवस्था में, अर्थात् भोजन करके बिना आचमन किए ब्राह्मण को छूले तो सौ आचमन करने से शुद्ध होताहै, यह अंगिरा मुनि का वचन है ॥८॥

क्षत्रियेण यदा स्पृष्ट उच्छिष्टेन कदाचन ॥
स्नानं जप्यं तु कुर्वीत दिनस्यार्दैन शुद्धचंति ॥९॥

यदि ब्राह्मण को उच्छिष्ट अवस्था में क्षत्रिय छूले तो स्नान और जप करनेसे आधे दिन में शुद्ध होता है ॥९॥

वैश्येन तु यदा स्पृष्टः शुना शूद्रेण वा द्विजः ॥
उपोष्य रजनीमेकां पंचगव्येन शुद्धयति ॥१७॥

यदि ब्राह्मण को उच्छिष्ट वैश्य, शूद्र, कुत्ता यह छूले तो एकरात्रि उपवास करके पंचगव्य के पान करने से वह शुद्ध होताहै ॥१०॥

अनुच्छिष्टन संस्पृष्टः स्नान येन विधीयते॥
तेनैवोन्छिष्टसंस्पृष्टः प्राजापत्यं समाचरेत॥१८॥

जिसके अनुच्छिष्ट के स्पर्श करने से स्नान कहा है उसके उच्छिष्ट को स्पर्श करने पर प्राजापत्य व्रत को करे ॥११॥

अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि नीलीशौचस्य वै विधिम् ॥
स्त्रीणां क्रीडार्थसंभोग शयनीये न दुष्यति ॥ १२ ॥

इसके उपरान्त नीली - नील के शौच की विधि कहता हूँ – स्त्री की क्रीडा के लिये भोग करने की शय्या पर नीला वस्त्र दूषित नहीं है ॥१२॥

पालनं विक्रयश्चैव तद्वत्या उपजीवनम् ॥
पतितस्तु भवेद्विप्रस्त्रिभिः कृच्छयंपोहति ॥ १३ ॥

जो ब्राह्मण नील को बेचता है और जो नील के व्यापारवाले से अपनी जीविका निर्वाह करताहै वह पापी होता है, और तीन कृच्छ्र व्रत के करने से शुद्ध होता है ॥१३॥

स्नानं दानं जपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम् ॥
स्पृष्ट्वा तस्य महापापं नीलीवस्त्रस्य धारणम् ॥ १४ ॥

नीले वस्त्र धारणकर जो स्नान, ध्यान, जप, होम, वेदपाठ और पितरोंको तर्पण करता है, उसके छू लेने से भी महापाप होता ॥१४॥

नीली रक्तं यदा व मज्ञानेन तु धारयेत् ॥
अहोसत्रोषितो भूत्वा पंचगन्येन शुद्धचतिः ॥१५॥

यदि अज्ञानसे जो मनुष्य नीले रंगे वस्त्र को पहनता है वह एकरात्रि उपवास कर पंचगव्य पीने से शुद्ध होता है॥१५॥

नीलीदार यदा भिंद्याद्राह्मणो वै प्रमादतः।
शोणितं दृश्यते यत्रा जिश्चादायणं चरेत् ॥१६॥

ब्राह्मण यदि प्रमादसे नील के काठ का भेदन करें और उसमें से रुधिर समान रस निकल आए तो उसे चांद्रायण व्रत को करना चाहिए १६॥

नीलीवृक्षेण पकं तु अन्नमश्नाति चेद्विजः ॥
आहारवमनं कृत्वा पंचगव्येन शुद्धयति ॥१७॥

जो ब्राह्मण नील के वृक्ष से पके हुए अन्न को खाता है वह उस खाये हुए अन्न को वमन करके पंचगव्य के पीने से शुद्ध होता है ॥१७॥

भक्षेत्रमादतो नीली द्विजा तिस्त्वसमाहितः ॥
त्रिषु वर्णेषु सामान्यं चांदायणमिति स्थितम् ॥१८॥

यदि द्विजाति असावधानी और अज्ञानता से नील को खालें , तो तीनों वर्णो को चांद्रायण व्रत करना कर्तव्य हैं ॥ १८ ॥

नीलीरतेन वस्त्रेण यदन्नमुपदीयते ॥
नोपतिष्ठति दातारं भोक्ताभुक्ते तु किल्विः पम् ॥१९॥

नीले रंग के वस्त्र को पहन कर जो अन्न परोसता है और उस परसे हुए अन्न को जो खाता है उस अन्नदान का फल दाता को नहीं मिलता; और अन्न का भोजन करने वाला भी पापका भागी होताहै ॥ १९ ॥

नीलीरतेन वस्त्रेण यत्पाके अपितं भवेत् ॥
तेन भुक्तेन विप्राणों दिनमेकमभोजनम्॥२०॥

नीले वस्त्र को पहनकर जो पकवान बनाया जाता है उसका भोजन करनेवाले ब्राह्मण को एक दिन उपवास करना चाहिए ॥२०॥

मृते भतरि या नारी नीलीवस्त्रं प्रधारयेत् ।
भता तु नरकं याति सा नारी तदनंतरम् ॥२१॥

जो स्त्री पति के मर जाने पर नीले वस्त्र को पहनती है, उसका पति नरक में जाता है, और फिर वह स्त्री भी नरक में जाती है ॥२१॥

नील्या चोपहते क्षेत्रे सस्यं यत्तु - प्ररोहति ॥
अभोज्यं तद्विजातीनां भुक्ता चांदायणं चरेत् ॥२२॥

नील उत्पन्न होने के कारण जो खेत दूषित हो गया हो उसमें उत्पन्न हुआ अन्न द्विजातियों के भक्षण करने योग्य नहीं, जो उस अन्नको खाता है उसे चांद्रायण व्रत करना पचित है ॥२२॥

देवद्रोणे, वृषोत्सर्गे यज्ञे दाने तथैव च ॥
अत्र स्नानं न कर्तव्यं दूषिता च वसुंधरा ॥२३॥

जिस स्थान में नील उत्पन्न हुआ है उस देवद्रोण में वृषोत्सर्ग, यज्ञ और दान कभी न करें स्नान भी न करे क्योंकि नील के प्रभाव से यह भूमि दूषित हो गई है ॥२३॥

वापिता यत्र नीली स्यात्तावदूरशुचिर्भवेत् ॥
यावद्वादशवर्षाणि अत ऊम्व शुविर्भवेत् ॥२४॥

जिस खेत में नील की खेती की गई है वह खेत बारह वर्ष तक अशुद्ध रहता है, इसके पश्च्यात शुद्ध होता है ॥ २४ ॥

भोजने चैव पाने च तथा चौषधमेषजैः॥
एवं नियंते या गावः पादमेकं समा चरेत् ॥२५॥

यदि भोजन कराने से या जल पिलाने से तथा औषधी देने से गौ मर जाए तो गौहत्या का चौथाई प्रायश्चित्त करे ॥२५॥

घंटाभरणदोषण यत्र गौर्विनिपीच्यते ॥
चरेदूर्व व्रतं तेषां भष णार्थं तु यत्कृतम् ॥२६॥

जहां घंटा बांधने के दोष से गौ मर जाए वहां भी वही गौहत्या का चौथाई प्रायश्चित्त करना चाहिए परन्तु केवल तब जब गौ के भूषण के लिये घंटा बांधा हो ॥२६॥

दमने दामने रोधे अवधाते च वैकृते ॥
गवां प्रभवता घातैः पादोनं व्रतमाचरेत् ॥२७॥

सरलता से गौ वश में न होती हो तो दमन करने, रोकने और मारने पर गौओं के आधातों से चौथाई व्रत करना चाहिए ॥२७॥

अंगुष्ठपर्वमानस्तु व मात्रा मांणतः ॥
सपल्लवश्च सायश्च दंड इत्यभिधीयते ॥२८॥

हर अंगुल पर जिस में गांठे हों और दो हाथ का जिसका प्रमाण हो, पत्ते भी हों और अग्रमागभी हो उसे दंड कहते हैं ॥२८॥

दंडादुक्ताधदान्येन पुरुषाः प्रहरंति गाम् ।
द्विगुणं गो तेषां प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥२९॥

यदि इस दंडसे अथवा और दंड से गौ पर प्रहार करें तो दुगुने गौ व्रत प्रायश्चित करने से शुद्ध होता है ॥२९॥

शृंगभंगे वस्थिभंगे चमनिर्मोचने तथा ॥
दशरात्रं चरेत्कृच्छं यावत्स्वस्थो भवेतदा ॥३०॥

यदि मारने से गौ के सींग टूट जाए अथवा चमडा उघड जाय, हड्डी टूट जाए तो दस रात्रि तक कृच्छ्र व्रत परन्तु तभी जब सींग आदि अच्छे हो ॥३०॥

गोमूत्रेण तु संमिश्र यावकं चोपजायते ॥
एतदेव हितं कृच्छ्र मिस्थमंगिरसा स्मृतम् ॥३१॥

गोमूत्र से मिल हुए जौ का सेवन ही कृच्छ्र व्रत है, यह अंगीरा ऋषि का वचन है ॥ ३१॥

असमर्थस्य बालस्य पिता वा यदि वा गुरुः ॥
यमुदिश्य चरेद्धर्म पापं तस्य न विद्यते ॥३२॥

जो बालक असमर्थ हो उसके बदले पिता अथवा गुरु जो प्रायश्चिच कर दे वह लड़का पाप का भागी नहीं होता ॥३२॥

अशीतिर्यस्य वर्षाणि वालो वाप्यूनषोडशः ॥
प्रायश्चित्ताईमहति स्त्रियो रोगिण एव च ॥३३॥

जिसकी अवस्था अस्सी वर्ष की हो, और जो बालक सोलह वर्ष की अवस्था से कम हो, और जो स्त्री रोगी हो, यह सभी आधे प्रायश्चिच के अधिकारी हैं ॥३३॥

मूर्छिते पर्तितेचापिगवियष्टिप्रहारते॥
गायत्र्यष्टसहस्रं तु प्रायश्चित्तं विशोधनम्॥३४॥

लाठी के आघात से गौ मूर्छित हो जाए अथवा वह गिर पड़े, तो वह आठ हजार गायत्री का जपरूप प्रायश्चित् करने से शुद्ध होता है ॥३४॥

स्नात्वा रजस्वला चैव चतुर्थेहि विशुद्धयति ॥
कुर्यादनसि निवृत्तनिवृत्ते न कथंचन ॥३५॥

रजस्वला स्त्री चौथे दिन स्नान करने से शुद्ध होती है; और वह रजोदर्शन की निवृत्ति पर ही स्नान करे, निवृत्ति के बिना हुए स्नान न करें ॥३५॥

रोगण मद्रजः स्त्रीणामस्मर्थ हि प्रवर्तते ॥
अशुद्धास्ता न तेन स्युस्तीसा वैकारिक हि तत् ॥३६॥

रोगवाली स्त्रियाँ जिनका अत्यन्त रज जाता है वह इससे अशुद्ध नहीं होती क्योंकि वह रज स्वाभाविक नहीं होता ॥३६॥

साध्वाचारा न तावत्स्यांदजो यावत्प्रवर्तते ॥
वृत्त रजासि गम्या स्त्री गृहकर्मणि चौद्रिये ॥३७॥

जब तक रज निकलता है तब तक उत्तम आचरण अर्थात पूजा पाठ आदि न करे; और जब रज निवृत्त हो जाए तभी पुरुष का संग और घर का कामकाज करे ॥३७॥

प्रथमेऽहनि चण्डाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी ॥
तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेऽहनि शुद्धयति ॥३८॥

रजोदर्शन के पहले दिन रजस्वला स्त्री चांडाली, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी, तीसरे दिन रजकी-धोबन होतीहै और चौथे दिन शुद्ध होती है ॥ ३८॥

रजस्खला यदा स्पृष्टा शुना शदेण चैव हि ॥
उपोष्य रजनीमेकां पंचगव्येन शुद्धयति ॥३८॥

यदि रजस्वला स्त्री को कुत्ता अथवा वा शूद्र छूले तो वह एक रात्रि तक उपवास कर और पंचगव्य को पीकर शुद्ध होती है ॥३९॥

द्वावतावशुची स्यातां दंपती शयनं गतौ ॥
शयनादुत्थिता नारी शुचिः स्यादशुचिः पुमान् ॥१०॥

जब तक स्त्री पुरुष शय्या पर शयन करते हैं तब तक दोनों अशुद्ध रहतेहैं, इसके पीछे स्त्री तो शय्या से उठते ही पवित्र हो जातीहै, परन्तु पुरुष तथापि शुद्ध नहीं होता ॥४०॥

गडूपं पादशौचं च न कुर्यात्कांस्यभाजने ॥
भस्मना शुद्धयते कांस्यं ताम्रमम्लेन शुद्धयति ॥ ४१ ॥

कांसे के पात्र में कभी कुल्ले न करें और पैर भी न धोए, अब पात्रशुद्धि कहते हैं, कांसे के पात्र की शुद्धि भस्म से और ताम्बे के पात्र की शुद्धि खटाई से होतीहै ॥४१॥

रजसा शुद्धयते नारी नदी वैगेन शुद्धयति ॥
भूमौ निःक्षिप्य षण्मासमत्यंतोपहतं शुचि ॥४२॥

स्त्री की शुद्धि रजोदर्शन से होती है, नदी वेग से शुद्ध होती है, अत्यन्त दूषित पात्रादि पृथ्वी में छः महीने तक रखने से शुद्ध होते हैं ॥४२॥

गवामातानि कांस्यानि शूटोच्छिष्टानि यानि तु ॥
भस्मना दशभिः शुद्धयेकाकेनोपहते तथा ॥ ४३ ॥

जिन कांसे के पात्रों को गौ ने सूंघ लिया हो, अथवा जिनमें शूद्र ने भोजन किया हो अथवा जिन्हें काक ने स्पर्श कर लिया हो उनकी शुद्धि दस दिन तक भस्म द्वारा मांजनेसे होती है ॥४३॥

शौचं सौवर्णरौप्याणां वायुनादुरश्मिभिः ॥
रजःस्पृष्टं शवस्पृष्टमाविकं च न शुद्धयति ॥ ४४ ॥

सुवर्ण और चांदी के पात्र वायु और सूर्य तथा चंद्रमा की किरणों के लगने से ही शुद्ध होते हैं, और जिस ऊन के वस्त्र में स्त्री का रज लग गया हो अथवा जिससे मुरदे का स्पर्श हो गया हो उसकी शुद्धि नहीं होती ॥४४॥

अद्भिर्मुदा च यन्मात्र प्रक्षाल्य च विशुद्धयति ॥
शुष्कमन्नमवित्रस्य भुक्त्वा सप्ताहमृच्छति ॥ ४५ ॥

ऊनके वस्त्र में पूर्वोक्त भ्रष्टता हुई हो तो उतने ही स्थान को मिटटी और जल से धोए तभी उसकी शुद्धि होती है, ब्राह्मण से अतिरिक्त किसी और के सूखे अन्न को खाकर सातदिन तक उपवास करन चाहिए ॥४५॥

अन्न व्यंजनसंयुक्तमईमा सेन शुद्धयति ॥
पयो दधि च मासेन षण्मासेन घृतं तथा ॥
तैलं संवत्स णैव का जायति वा न वा ॥ ४६॥

और व्यंजन युक्त अन्न को खाकर एक पक्ष तक उपवास करें और दूध दही खाकर एक महीने तक उपवास करे और घी को खाकर छह महीने तक उपवास करने से शुद्ध होताहै, मनुष्य के पेट में तेल एक वर्ष में पचता है अथवा नहीं भी पचता ॥४६॥

यो भुक्ते हि च शूदानं मासमेकं निरंतरम् ॥
इह जन्मनि शूदत्वं मृतः श्वा चाभिजायते ॥ १७॥

जो प्रतिदिन महीनेभर तक शूद्र के अन्न को खाताहै, वह इसी जन्म में शूद्र हो जाताहै, और मरकर उसे कुत्ते की योनि मिलती है ॥४७॥

शूद्रानं शूद्रसंपर्कः शूद्रेण च सहासनम् ॥
शूद्राज्ज्ञाना गमः कश्चिज्ज्वलंतमपि पातयेत् ॥ ४८ ॥

शूद्र का अन्न, शूद्र के साथ मेल और शूद्र के संग एक आसन पर बैठना, शूद्र से किसी विद्या का सीखना, यह प्रतापवान् मनुष्य को भी पतित कर देता है ॥४ ॥

अप्रणामं गते शूदे स्वस्ति कुर्वति ये द्विजाः ॥
शूद्रोपि नरकं याति ब्राह्मणोपि तथैव च ॥ ४९ ॥

शूद्रके विना प्रणाम किये हुए जो ब्राह्मण आशिर्वाद देते हैं वह ब्राह्मण और शूद्र दोनों ही नरक में जाते हैं ॥४९॥

दशाहाच्छुद्धयते विप्रो द्वादशाहेन भूमिपः॥ .
पाक्षिकं वैश्य एवाहुः शूदो सेन शुद्धयति ॥५०॥

जन्ममरण के सूतकसे ब्राह्मण दस दिन में शुद्ध होता है, क्षत्रिय बारह दिन में, वैश्य पंद्रह दिन में और शूद्र एक महीने में शद्ध होताहै ॥५०॥

अग्निहोत्री तु यो विमाशूदानं चैव भोजयेत् ॥
पंच तस्य प्रणश्यति चात्मा वेदास्त्रयोमयः ॥ ५१ ॥

जो अग्निहोत्री ब्राह्मण शूद्रके अन्न को खाताहै उसकी देह, वेद और तीनों अग्नि यह पांचों नष्ट हो जाते हैं ॥५१॥

शूदानेन तु भुक्तेन यो द्विजो जनयेत्सुतान् ॥
यस्यानं तस्य ते पुत्रा अन्नाच्छुक्र प्रवर्तते ॥५२॥

जो ब्राह्मण शूद्र के अन्न को खाकर पुत्र उत्पन्न करता है, वह पुत्र उसी के हैं जिसका वह अन्न था क्योंकि अन्न से ही वीर्य की उत्पत्ति होती है ॥५२॥

शूद्रेण स्पृष्टमुच्छिष्टं प्रमादादथ पाणिना ॥
तद्विजेभ्यो न दातव्यमापस्तंबोऽब्रवीन्मुनिः ॥५३॥

शूद्र ने जिसे अपने हाथ से छू लियाहो वह उच्छिष्ट को ब्राह्मण को न दे यह वचन आपस्तम्ब मुनि का है ॥ ५३॥

ब्राह्मणस्य सदा भुंक्त क्षत्रियस्य च पर्वसु ।
वैश्येष्वापत्सु मुंजीत न शुदेपि कदाचन ॥ ५४ ॥

ब्राह्मण का अन्न सर्वदा खाने के योग्य है, क्षत्रिय के अन्न को पर्व – यज्ञ के समय में खाया जा सकता है, विपत्ति के समय में वैश्य के अन्न का भी भोजन किया जा सकता है, परन्तु शूद्र के अन्न का कभी भोजन नहीं करना चाहिए ॥५४॥

ब्राह्मणान्ने दरिद्रत्वं क्षत्रियान्ने पशुस्तथा ॥
वैश्यानेन तु शूदत्वं शूदाने नरकं ध्रुवम् ॥५५॥

ब्राह्मण के अन्न का भोजन करने वाला दरिद्री, क्षत्रिय के अन्नका भोजन करनेवाला पशु होता है, और जो वैश्य के अन्न को खाता है वह शूद्र होता है और शूद्र के अन्न को खानेवाला निश्चय ही नरक को जाता है ॥५५॥

अमृतं ब्राह्मणस्यान्नं क्षत्रियानं पयः स्मृतम् ॥
वैश्यस्य चानमे वानं शूद्रानं रुधिरं ध्रुवम् ॥ ५६ ॥

ब्राह्मण का अन्न अमृतस्वरूप है, क्षत्रिय का अन्न दूध के समान है, वैश्य का अन्न केवल अन्न मात्र ही है; और शूद्र का अन्न निश्चय ही रूधिर है ॥५६॥

दुष्कृतं हि मनुष्याणामनमाश्रित्य तिष्ठति ॥
यो यस्यानं समन्नाति स तस्याभाति किल्विषम् ॥५७॥

मनुष्य जो पाप करता है वह अन्न में रहता है इसलिए जो जिसका अन्न भोजन करता है वह उसके पाप का भोजन करता है ॥५७॥

सूतकेषु यदा विप्रो ब्रह्मचारी जितेंद्रियः ॥
पिबेत्पानीयमज्ञानार्मुक्ते भक्तमया पि वा ॥५८॥

उत्तार्याचम्य उदकमवतीर्य उपस्पृशेत् ॥
एवं हि स मुधाचारो वारुणेनाभिमंत्रितः ॥५९॥

यदि जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी ब्राह्मण अज्ञान से सूटक में जल पी ले अथवा भात खा ले, तो वमन करके आचमन करे, और भलीभांति से वरुण के मंत्रो को पढेते हुए जल को शरीर पर छिडके ॥५८-५९॥

अग्न्यगारे गवां गोष्ठे देवब्राह्मणसन्निधौ ॥
आचरेनपकाले च पादुकानां विस जनम् ॥६०॥

अग्नि होत्रशाला, गौशाला, देव और ब्राह्मणों के निकट जप के समय में खडाऊओं को त्याग दे ॥६०॥

पादुकासनमारूढो गेहापंचगृहं ब्रजेत् ॥
छेदयेत्तस्य पादौ तु धार्मिकः पृथिवीपतिः ॥६१॥

जो मनुष्य खडाऊंओं पर चढकर अपने घर से पांच घर तक भी जाय तो राजाको उचित है कि उसके पैरों को कटवा डाले ॥६१॥

अग्नि होत्री तपस्वीच श्रोत्रियो वेदपारगः ॥
एते वै पादुकैयौति शेषान्दैडेन ताडयेत् ॥६२

क्योंकि केवल अग्नि होत्री, तपस्वी, श्रोत्रिय और वेदों को जाननेवाला ही खडाऊं पर चढकर चलने के अधिकारी हैं, और अन्य पुरुष राजा द्वारा दण्ड देने के अधिकारी हैं ॥६२॥

जन्मप्रभृतिसंस्कारे चूडांते भोजने 'नवे॥

असपिडे न भोक्तव्यं चूडस्यांते विशेषतः ॥६३॥

जन्म आदि संस्कार में, चूडाकर्म में, अन्नप्राशन में अपने असपिंड के घर भोजन न करें और चूडाकर्म में तो कदापि न करे ॥६३॥

याचकानं नवनादमपि सूतकभोजनम् ॥
नारीप्रथमगर्भेषु भुक्त्वा चांद्रायणं चरेत् ॥६४ ॥

भिक्षुक का अन्न, नवश्राद्ध - जो मरने के ग्यारहवें दिन होता है, सूतक का अन्न, और स्त्री के पहले गर्भाधान में अन्न खानेवाले को चांद्रायण व्रत का प्रायश्चित्त करना चाहिए ॥६४॥

अन्यदत्ता तु या कन्या पुनरन्यस्य दीयते ॥
तस्य चान्नं न भोक्तव्यं पुनर्भूः सा प्रगीयते ॥६५॥

जो कन्या एक को देकर फिर दूसरे को दी गई हो उसके अन्न भी भोजन करना उचित नहीं, क्योंकि यह कन्या पुनर्मू नाम से पुकारी गई है ॥६५॥

पूर्वस्य श्रावितो यश्च गर्भो यश्चाप्यसंस्कृतः॥
द्वितीये गर्भसंस्कारस्तेन शुद्धि विधीयते ॥६६॥

यदि किसी स्त्री को अन्य से गर्भ रह गया है ऐसा सुना जाए तो उस गर्भ के संस्कार नहीं करने चाहिए और फिर दूसरे गर्भाधान के समय में संस्कार करने से ही उस की शुद्धि होती है ॥६६॥

राजाधैर्दशभिर्मासैर्यावत्तिष्ठति गुर्विणी ॥
तावदक्षा विधातव्या पुनरन्यो विधीयते ॥६७॥

जब तक वह स्त्री गर्भवती रहती है तब तक उस स्त्री की शुद्धि नहीं होती इसलिए उसके हाथ से दैविककार्य का उपयोग नहीं लेना चाहिए परन्तु पुनः वह अपने पति से गर्भिणी होकर उसके गर्भसंस्कार किये जाएं तब तक उसकी रक्षा करनी चाहिए। अन्य गर्भ स्थापित होने से वह शुद्ध होती है ॥६७॥

भृतशासनमुल्लंध्य या च स्त्री विप्रवर्तते ॥
तस्याश्चैव न भोक्तव्यं विज्ञया कामचारिणी ॥६८॥

जो स्त्री पति की आज्ञा का उल्लंघन करती है उसके यहां के अन्न का भोजन करना भी उचित नहीं, और उस स्त्रीको कामचारिणी जानना चाहिए ॥६८॥

अनपत्या तु या नारी नाश्नीयात्तद्गृहपि वै ॥
अथ भुक्ते तु यो मोहात्पूयं स नरकं ब्रजेत् ॥ ६९ ॥

जो स्त्री बाँझ हो उसके यहां भी भोजन करना उचित नहीं है, यदि कोई उसके यहां मोह से भोजन कर लेता है तो वह पूय नरक में जाता है ॥६९॥

स्त्रिया धनं तु ये मोहादुपजीवति मानवाः ॥
स्त्रिया यानानि वासांसि ते पापा यांत्यधोगतिम् ॥७०॥

जो मनुष्य मोहित होकर स्त्री के धन को भोगते हैं, और जो स्त्री की सवारी अथवा जो उसके वस्त्रों का व्यवहार करते हैं, वह पापी अधोगति को प्राप्त होते हैं ॥७०॥

राजान्नं हरते तेजः शूद्रान्नं ब्रह्मवर्चसम् ॥
सूतकेषु व यो भुक्त स भुक्त पृथिवीमलम् ॥७१॥

राजा का अन्न तेज का हरण करताहै, और शूद्र का अन्न ब्रह्मतेज का हरण करता है; और जो सूतक में खाता है, वह पृथ्वी के मल का भक्षण करता है ॥७१॥

इत्यंगिरः प्रणीतं धर्मशास्त्रं सम्पूर्णम् ॥५॥

इत्याङ्गिरसस्मृतिः समाप्ता ॥ ५॥